

माहेश्वरी भवन (अंधेरी) लोकार्पण समारोह 20 नवम्बर 2004
मुख्य अतिथि श्री रमेशचन्द्रजी लाहोटी – उद्बोधन के मुख्य अंश

माहेश्वरी भवन के लोकार्पण का श्रेय आपने मुझे दिया इसके लिये मैं मण्डल का हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। मैंने सम्पूर्ण भवन का अवलोकन किया और देखकर लगा कि यह वास्तुकला का अद्भुत नमूना है। निःसन्देह यह समाज की बहुत बड़ी उपलब्धि है। त्यौहार तो बहुत है हमारे। उपनिषदों में कहा गया है – “असतो मां सद्गमयः, मृत्योर्मा अमृतं गमयः, तमसो मा ज्योर्तिगमयः”, इसके प्रतीक रूप में हमारे पूर्वजों ने होली, दशहरा और दीपावली त्यौहारों की रचना की। होली ‘असतो मां सद्गमयः’ का प्रतीक है, असत्य पर सत्य की विजय। दशहरा ‘मृत्योर्मा अमृतं गमयः’ का प्रतीक है, मृत्यु पर अमृत की विजय का। दीपावली ‘तमसो मां ज्योर्तिगमयः’ की प्रतीक है, इस की प्रतीक है कि अंधकार पर प्रकाश के माध्यम से विजय प्राप्त की जा सकती है।

अभी इस कार्यक्रम का शुभारम्भ दीप प्रज्वलित करके हुआ। जब हम दीपक की बातियों को प्रज्वलित कर रहे थे, मैंने देखा कि प्रज्वलित करते ही किसी न किसी बाती को हवा बुझा दे रही थी। हम प्रयास करते रहे। अंत में दीपक प्रज्वलित हो गया और एक बार हो गया तो अब वह स्थाई रूप से प्रज्वलित है। उपरोक्त छोटी सी घटना हमारी सामाजिक व्यवस्था में संघर्ष के लिए एक महत्वपूर्ण संकेत देती है। एक शायर ने बड़ी सुन्दर बात कही है। उसने लिखा कि—

*अब हवाएं ही करेंगी रोशनी का फैसला।
जिस दिये में जान होगी वो दिया बच जाएगा।।*

यदि समाज सशक्त एवं संगठित हो तो चाहे हवाएं चले, आंधियां आयें या झंझावात हो तो भी जिस दीपक को हम प्रज्वलित करेंगे उसका प्रकाश स्थायी रहेगा। इस दीपक को कोई बुझा नहीं सकेगा। मैं दीपावली के पवित्र त्यौहार के लिए आप सबको अपनी शुभकामनाएं ज्ञापित करता हूं। आपका नया वर्ष ही नहीं आपका सम्पूर्ण जीवन, समाज का यह वर्ष और समाज का सम्पूर्ण आगामी भविष्य गौरवमय, मंगलमय हो, सुख और समृद्धि लेकर के आये। इस हेतु मैं परमपिता से प्रार्थना करता हूं और अपनी शुभकामनाएं ज्ञापित करता हूं।

दीपावली का त्यौहार श्री महालक्ष्मी की पूजा का त्यौहार है। ये पूजा तब तक पूरी नहीं होती जब तक श्री महालक्ष्मी की पानड़ी की पूजा हम न कर लें। इस पानड़ी में केवल महालक्ष्मी ही नहीं है उनकी बायीं ओर गणपति और दायीं ओर भगवती सरस्वती भी विराजमान हैं। जब हम महालक्ष्मी की पूजा करते हैं तब हम गणपति और सरस्वती की पूजा भी करते हैं। कहते हैं कि भगवती महालक्ष्मी हमारी पूजा अर्चना तब तक स्वीकार नहीं करतीं जब तक उनके साथ हम गणेशजी और भगवती सरस्वती की पूजा भी न करें। स्पष्ट संकेत है कि लक्ष्मी उसी के घर में आती है जिसके घर में विद्या और बुद्धि है। सरस्वती विद्या एवं गणेशजी बुद्धि और विवेक के प्रतीक हैं। अतः यदि हम चाहते हैं कि महालक्ष्मी की हमारे ऊपर कृपा हो और हमारे घर में प्रवेश हो तो ये तब तक संभव नहीं है जब तक कि हमारे घर, परिवेश और वातावरण में विद्या

और बुद्धि का अस्तित्व नहीं है। लक्ष्मी का प्रयोग सार्थक तभी तक हो सकता है जब तक उसकी संगति विद्या और बुद्धि के साथ रहती है। यदि विद्या और बुद्धि के अभाव में महालक्ष्मी का आगमन होता है तो अर्थ के स्थान पर अनर्थ भी हो सकता है और इसके बहुत से उदाहरण मेरी और आपकी जानकारी में होंगे। दीपावली का यह संदेश हम सबके लिये है। आज के संदर्भ में, जिस भवन का लोकार्पण करने का सौभाग्य आपने मुझे दिया है, उसमें जिस धन का विनियोग हुआ है उसका अर्जन और उसका उपयोग विद्या, बुद्धि और विवेक की संगति से हुआ है, मैं इसके लिए आश्वस्त हूँ। इसीलिये यह भवन निःसंदेह 'बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय' का उद्देश्य प्राप्त कर सकेगा इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है।

हम सभी सांसारिक प्राणी हैं। हमसे कोई साधु, सन्यासी या तपस्वी नहीं है, किन्तु एक बात अवश्य कह सकते हैं कि हमसे अधिकांश या लगभग सभी लोग जो यहां उपस्थित हैं वे सभी नैष्ठिक सद्गृहस्थ हैं। नीति शास्त्र में नैष्ठिक सद्गृहस्थ के पांच लक्षण बताये गये हैं—

1. परिवार में पति और पत्नी में मतैक्य हो, (पति पत्नी एक आत्मा और दो शरीर होते हैं)
2. बच्चे आज्ञाकारी हों।
3. धनार्जन (धन का अर्जन) सुनीति पूर्वक होता हो।
4. अतिथि का सत्कार होता है — 'अतिथि देवो भवः'।
5. अपनी आय का एक निश्चित अंश परमार्थ के कार्यों में विनियोजित होता हो।

उपरोक्त पांच लक्षणों का पालन करने वाला कोई भी गृहस्थ किसी तपस्वी से कम नहीं है। यह भवन जिसका लोकार्पण आज हुआ है किसी व्यक्ति विशेष के वैभव का प्रतीक नहीं है। ये समाज के नैष्ठिक सद्गृहस्थों के सामूहिक संकल्प, उनकी सेवा से जनित प्रकल्प और उसकी उपलब्धि है। यह भवन नहीं, एक मंदिर है जिसका दर्शन करने के उपरान्त मेरे मन में इस भवन की प्रशंसा करने का नहीं, अपितु प्रणाम करने का विचार आया है और मैं इस भवन को श्रद्धा पूर्वक नमन करता हूँ। इस भवन के निर्माण करने में मुझे विदित है कि जिससे जो बना उसने दिया है। किसी भी सात्त्विक प्रकल्प को पूरा करने के लिये पांच बातों की आवश्यकता होती है। (i) संकल्प (ii) सद्बुद्धि, (सद्बुद्धि जिसके बगैर शुभ कार्य करने का विचार मन में नहीं आता) (iii) सेवा (iv) श्रम एवं (v) साधना (साधना में साधन भी समाहित है, धन भी)। जब ये पांचों प्रतीक एकत्रित होते हैं तब समाज के सद्गृहस्थ, बुद्धि, श्रम, और धन का दान करते हैं, उससे ऐसे भवनों का निर्माण होता है।

एक सज्जन ने एक बार कहा कि संकल्प, सेवा और साधना जब तक एकीकृत नहीं होते, तब तक भवन जैसे पारमार्थिक और परोपकारी प्रकल्पों का निर्माण नहीं हो सकता, यह तो ठीक है परन्तु इन तीनों में सबसे महत्वपूर्ण क्या है?

वे सज्जन ईश्वर की कृपा से बहुत सम्पन्न थे और कदाचित्त यह कहलवाना चाहते थे कि जब तक धन नहीं हो तब तक आपके संकल्प और सेवा किस काम के अर्थात् धन के बगैर कुछ नहीं हो सकता। किन्तु चर्चा करने वाले सज्जन ने कहा कि मेरे मित्र एक बात बताओ, यदि हम तीन पहिये की साईकिल पर सवारी कर रहे हो और कोई यह पूछे कि इन तीन

पहियों में सबसे जरूरी कौन सा पहिया है तो आप क्या उत्तर देंगे? वे सज्जन निरुत्तर हो गये। तीन पहियों की साईकिल तीनों पहियों के बिना चल ही नहीं सकती। इसलिये शुभ कार्यों का संपादन सेवा, संकल्प और साधना इन तीनों के अस्तित्व के बिना कभी हो ही नहीं सकता।

समाज में दान देने वाले बहुत होते हैं किन्तु दान भी दो प्रकार के होते हैं। विनम्रता से दिये गये दान की महत्ता बढ़ती है, प्रभाव बढ़ता है, किन्तु दान देकर के यदि मन में अहंकार या अभिमान का प्रादुर्भाव हो जाए तो दान का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

अब्दुल रहीम खानखाना बहुत सम्पन्न थे। नियमित रूप से अपने हाथों से धन, धान्य का दान दिया करते थे परन्तु देते समय कभी ये देखते नहीं थे कि दान लेने वाला कौन है? किसी व्यक्ति ने जब यह देखा तो उसने रहीम जी से प्रश्न किया कि –

*सीखी कहाँ रहीमजू ऐसी देनी देन,
ज्यों ज्यों कर ऊँचो उठे, त्यों त्यों नीचे नैन*

जैसे-जैसे आपके दान देने की क्षमता बढ़ती जाती है और दान देने वाला हाथ ऊँचा होता जाता है, वैसे-वैसे आपकी पलकें झुकती जाती हैं। यह विचित्र बात है, इसका रहस्य क्या है? रहीमजी ने उत्तर दिया—

*देने वाला और है देता है दिन रैन,
लोग भ्रम मेरो करें ताते नीचे नैन।*

देनेवाला दाता कोई और है? वह मेरे हाथों में देता है और मैं सुपात्र के हाथों में सौंप देता हूँ। पर लोग यह समझते हैं कि देनेवाला मैं हूँ, उनके इस भ्रम के कारण मुझे बड़ा संकोच होता है और मेरे नेत्र शर्म से झुके रहते हैं।

दान देते समय यह भावना होनी चाहिये कि ईश्वर की कृपा है कि उसने हमें दान देने योग्य बनाया और हमारे हाथों को यह सौभाग्य सौंपा कि इन हाथों से कोई शुभ कर्म हो सके, कुछ दान हो सके। विनम्रता के साथ ईश्वर के प्रति आभार ज्ञापित करते हुए इस अवसर का हमें उपयोग करना चाहिये। हम सबकी ऐसी भावना बनी रहे और ऐसे ही सद्विचार हम सबके मन में बने रहें, यही प्रभू से प्रार्थना है।

लौकिक कर्तव्यों का संपादन करते हुए भी हम सब यदि नैष्ठिक सदगृहस्थ का जीवन यापन करते रहेंगे तो मुझे इस बात का विश्वास है कि जैसा लोकार्पण का अवसर आज उपस्थित हुआ है, ऐसे लोकार्पण के एक नहीं, अनेक अवसर आते रहेंगे। आपने मुझे अपने बीच आने और अपने कुछ विचार व्यक्त करने का अवसर दिया और साथ ही आप सबका सामूहिक आशीर्वाद प्रदान किया इस हेतु मैं आपका बहुत बहुत आभार ज्ञापित करता हूँ। धन्यवाद!
